Peer Reviewed/ Refereed Journal

ISSN -PRINT-2231-3613ONLINE2455-8729
International Educational Journal
CHETANA
Impact Factor SJIF=4.157

Received on 23rd Jan. 2020, Revised on 9th Feb. 2020; Accepted 19th Feb. 2020

ARTICLE

जैन धर्म का समग्र विभाजन और उसका प्रभाव

*** हूरुई** (*Hu Rui*)
एसोसिएट प्रोफेसर, दक्षिण एशियाई भाषा व साहित्य विभाग
डाक्टर, विदेशी साहित्य और संस्कृति अनुसंधान केंद्र
ग्वांगडोंग विदेशी अध्ययन विश्वविद्यालय,चीन
Email- 904950606@qq.com 2010hurui@163.com, Mob. - 86-15918796285, 18468249047

मुख्य शब्द *– जैन धर्म, संप्रदाय, भारतीय धर्म, प्रभाव आदि।*

संक्षेप

जैन धर्म भारत से प्रारंभ हुए प्रमुख धर्मों में से एक है, जैन धर्म की प्राचीनता के विषय में स्पष्ट नहीं है, भारत की श्रमण परम्परा से निकले जैन धर्म के प्रवर्तक है २४ तीर्थंकर जिनमें भगवान महावीर स्वामी अंतिम एवं प्रमुख तीर्थंकर हैं जिनका जन्म ईसा पूर्व छठी शताब्दी में वैशाली के गणतन्त्र राज्य कुण्डलपुर में हुआ था। जैन धर्म एवं बौद्ध धर्म का उदय समान काल में हुआ और विभिन्न प्रकार से भारतीय समाज को प्रभावित किया। जैन धर्म प्रारंभ में कई उप-श्रेणियों में विभाजित था, कालांतर में जैन धर्म श्वेताम्बर और दिगंबर दो संप्रदाय में बंट गया। जैन धर्म के दोनों सम्प्रदायों में आपसी मतभेद हैं और उनके अपने - अपने धार्मिक ग्रन्थ भी हैं। इस शोध पत्र में जैन धर्म की उत्पति तथा विकास,विभाजन, प्रमुख संप्रदाय एवं उनके दर्शन आदि विभिन्न पक्षों पर प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है।

परिचय

जैन धर्म भारत के पारंपरिक धर्मों में से एक है, वर्तमान समय में भारत में जैन धर्मावलम्बियों की संख्या लगभग ४० लाख है जो भारत की कुल जनसँख्या का ०.०४ प्रतिशत है,विदेशों में लगभग एक लाख जैन धर्मावलम्बी है। हिन्दू धर्म, इस्लाम, ईसाई, सिख धर्म और बौद्ध धर्म के बाद भारत में जैन धर्म छठवें स्थान पर है। जैन धर्म स्थानीय ब्राह्मण धर्म के "वेदों की सर्वश्रेष्ठता" का विरोधी है, बलि की प्रथा को अस्वीकार करता है, " ब्राह्मण वर्चस्व ", ब्राह्मण धर्म के देवताओं के पूजन तथा जाति व्यवस्था का विरोध करते हुए जैन धर्म जाति समानता पर जोर देता है, तथा तपस्या एवं संयम की प्रधानता पर बल देता है। "अहिंसा" की धारणा के कारण, जैन धर्मावलम्बी आमतौर पर हत्या से संबंधित व्यवसायों में संलग्न नहीं होते हैं, जैसे कि सैनिक, कसाई, मोची के कार्य, यहां तक कि कृषि कार्य भी । जैन लोग व्यवसाय, व्यापार या उद्योग में अधिक व्यस्त हैं। जैन धर्म का भारतीय अर्थव्यवस्था पर भी गहरा प्रभाव पड़ा है।

सामाजिक, आर्थिक और राजनितिक विकास के साथ, प्राकृतिक विपदाओं की घटना तथा जैन धर्मावलम्बियों की धर्म की व्याख्या के बीच जैन धर्म श्वेताम्बर एवं दिगंबर दो भागों में विभक्त हो गया, दिगंबर अपेक्षाकृत परम्परावादी हैं ,वहीं श्वेताम्बर के धार्मिक विचार पूरी तरह परम्परावादी नहीं थे, बल्कि विचारों में खुलेपन के समर्थक हैं।श्वेताम्बर धार्मिक विचारों एवं परम्परा के पालन में अधिक लचीले हैं, लेकिन वे जीव हत्या नहीं करने पर ज़ोर देते हैं, लेकिन वस्त्र पहनने की

अनुमति देते हैं, मुलभुत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए समाज के साथ संपर्क के लिए अनुमति देते हैं, संयम एवं तपस्या पर अधिक जोर नहीं देते हैं। दिगंबर अपेक्षाकृत रुढ़िवादी हैं,श्वेताम्बर एवं दिगंबर के रूप में विभाजन से पहले यह संयम एवं तप पर अधिक ज़ोर देता था, उनका विश्वास है कि धर्मावलम्बियों को संसार से दूर रहना चाहिए और जंगल में जाकर नग्नत्व का पालन करते हुए तप करना चाहिए।

जैन धर्म के दोनों सम्प्रदायों श्वेताम्बर एवं दिगंबर दोनों की अपनी अपनीकिवंदतीयां हैं। दोनों संप्रदाय अपनी किवंदतीयों को ऐतिहासिक एवं सत्य मानते है तथा दुसरे को काल्पनिक।श्वेताम्बरों का मानना है कि दो सम्प्रदायों में विभाजन के पूर्व जैन धर्म में सात बार आंशिक विभाजन हुआ था, जिन्हें सम्मिलित रूप से निःनवा कहा जाता था। दिगंबर संप्रदाय के अनुसार जैन धर्म के इतिहास में श्वेताम्बर और दिगंबर के रूप में [पहली बार विभाजन हुआ है, अन्य कोई विभाजन नहीं हुआ है।

जैन धर्म का लघु विभाजन

"जैन धर्म का इतिहास" पुस्तक के लेखक असीम कुमार रॉय के अनुसार व र्धमान महावीर के समय काल में ही जैन धर्म का विभाजन हो चूका था। बहुरतनाम के प्रथम निह्न्व के संस्थापक भगवान महावीर के दामादजमालिथे, लेकिन यह संप्रदाय शीघ्र ही लुप्त हो गया।[1] द्वितीय निह्न्वा की स्थापना तिष्यगुप्त ने की जो जीव पेसिया के नाम से प्रसिद्ध हुआ। तृतीय निह्न्व की स्थापना आचार्य अषाढ़भूति ने की जो अवत्य के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

भगवान महावीर के निर्वाण के २२० वर्ष पश्चात आचार्य अश्वमित्र द्वारा चौथे निह्न्व की स्थापना हुई, आचार्य अश्वमित्र के अनुसार सब कुछ अस्थायी है, संसार में कुछ भी स्थायी नहीं है। पंचम निह्न्व की स्थापना भगवान महावीर के निर्वाण २२८ वर्ष के पश्चात महागिरी के प्रशिष्य और धनगुप्त के शिष्य गंगाचार्य ने की। आचार्य गंगाचार्य के अनुसार शीत और उष्ण दो परस्पर विपरीत भावों का संवेदन एक ही समय में सम्भव है। इस सिद्धांत को द्वैक्रियवाद के नाम से भी जाना जाता है। महावीर के निर्वाण के ५४४ वर्ष के पश्चात आचार्य रोहगुप्त ने त्रिराशिवाद का प्रतिपादन किया जिसमें जीव और राशि को अलग अलग स्वीकार किया गया, यह षष्टमनिह्न्व है। महावीर– निर्वाण के ५८४ वर्ष के पश्चात सप्तमनिह्न्व की उत्पति दशपुर में अबद्ध्वाद के रूप में हुई जिसके अनुसार आत्मा का कर्म के साथ बंधन नहीं होता अपितु स्पर्श मात्र होता है।

ये शाखाएं अपेक्षाकृत कम समय के लिए अस्तित्व में थी, प्रभावशाली शाखा के रूप में विकसित नहीं हो पाई।श्वेताम्बर संप्रदाय विकास क्रम के इतिहास में इन शाखाओं के उत्थान - पतन के बारे में लिखित नहीं है, यह सत्यापित किया जाना बाकी है कि ये शाखाएं अस्तित्व में थी या नहीं।

जैन धर्म का मौलिक विभाजन

पूर्व में सातबारके आंशिक विभाजन की तुलना में श्वेताम्बर और दिगंबर के रूप में विभाजन को जैन धर्म का पहला मौलिक विभाजन कह सकते है। इस विभाजन के परिणामस्वरूप जैन धर्म पूर्ण रूप से दो सम्प्रदायों में विभक्त हो गया।

अकादमिक दृष्टिकोण के अनुसार जैन धर्म के विभाजन का कारण ईसा पूर्व चौथी सदी में उत्तर भारत में आए अकाल को माना जाता है। ईसा पूर्व चौथी सदी के आस पास मगध में भयंकर अकाल पड़ा, भगवान महावीर के निर्वाण के पश्चात छठे जैन आचार्य भद्रबाहु ने भविष्यवाणी की कि यह अकाल बारह वर्षों तक रहेगा, इसलिए आचार्य भद्रबाहु के नेतृत्व में १२००० जैन अनुयायी बिहार के मगध से दक्षिण भारत के मैसूर राज्य की तरफ शरण के लिए निकल गए। परन्तु आचार्य भद्रबाहु गंतव्य तक नहीं पहुँच सके, जब वे अपने अनुयायियों के साथ श्रवणबेलगोला पहुंचे तो अनुभूति हुई कि उनकी जीवन यात्रा

[1]Mun|Uttam Kamal Ja|n, ***Ja/na Sects and Schools***, Delh|: Concept Publ|sh|ng Company, 1975, P. 25.

अब ज्यादा शेष नहीं है, अतः उन्होंने अपने अपने अनुयायियों को आगे बढ़ने का आदेश देकर स्वयं श्रवणबेलगोला में रुक गए और वहीं कैवल्य को प्राप्त हुए।

क्योंकि तत्कालीन समय में लेखन परम्परा के अभाव में श्रुति परंपरा के माध्यम से भगवान महावीर के सभी उपदेश एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक हस्तांरित होते गए, मगध में भयंकर अकाल में अधिकांश विद्वान् जैन आचार्यों के मृत्यु के कारण जैन धर्म के धार्मिक ग्रन्थ और धार्मिक विचार लुप्त हो गए थे। इसलिए तीसरी शताब्दी में सम्राट चन्द्रगुप्तमौर्य के शासन काल में पाटलिपुत्र में प्रथम जैन संगीति की आयोजन हुई जिसकी अध्यक्षता आचार्य स्थूलभद्र ने की। सभा में भाग लेने के लिए आचार्य भद्रबाहू के उतराधिकारी का भी पाटलिपुत्र में आगमन हुआ। इस सभा में दो बड़े परिवर्तन देखने को मिले।

सर्वप्रथम, नग्नत्व को समाप्त कर दिया गया, यहाँ के अनुयायीयों ने एक छोटा श्वेत वस्त्र लपेटना शुरू किया। उत्तर भारत के जैन अनुयायीयों ने "बारह आगमों" में विभक्त भगवान महावीर के धार्मिक उपदेशों को खंड– खंड करके ग्यारह अंगों का संकलन किया गया, बारहवां अंग किसी को स्मरण नहीं था, इसलिए उसका संकलन नहीं किया जा सका। इस सम्मलेन को "पाटलिपुत्र– वाचना" के नाम से जाना जाता है।

आचार्य भद्रबाहु के उतराधिकारी यह मानते हैं कि श्वेताम्बर अनुयायियों द्वारा श्वेत वस्त्र पहनना "पञ्चमहाव्रत" में से "अपरिग्रह " का उलंघन है, साथ ही वे महासंघ द्वारा संकलित "बारह अगम " को भी मान्यता नहीं देते हैं, क्योंकि मूल धर्मवैधानिक शास्त्र भगवान महावीर के निर्वाण के कुछ वर्ष के पश्चात ही लुप्त हो गए थे, उनका मानना है कि श्वेताम्बर भगवान महावीर के द्वारा गए धार्मिक शिक्षाओं से पहले ही विमुख हो गए हैं, इसलिए आचार्यभद्रबाहुकेउतराधिकारी स्वयं को मूल संघ मानते है। तब से जैन धर्म में दो संप्रदाय अस्तित्व में आये, परन्तु पाटलिपुत्र में हुए प्रथम जैन संगीति में दोनों सम्प्रदायों में पूर्ण विभाजन नहीं हुआ, कुछ प्रमुख विषयों पर उनके विचार समान रहे, जैसे श्वेताम्बर और दिगंबर दोनों नग्नत्व व्रत धारण किये अपने दिगम्बरों की समान आस्था एवं विश्वास के साथ पूजते हैं, जिन्हें मथुरा के जैन खण्डहरों में देखा जा सकता है।

मथुरा, गंगा और यमुना नदी द्वारा निर्मित भौगोलिक क्षेत्र के केंद्र में स्थित है, यह न केवल वाणिज्य - व्यापार का केंद्र है बल्कि धार्मिक कला का केंद्र भी है। मथुरा के निकट कंकाली टीला में पुरातत्ववेत्ताओं ने जैन धर्म के अवशेषों को खोजा है जहाँ एक जैन स्तूप, दो जैन मंदिर, कई जैन मूर्तियों और शिलालेखों सहित बहुत से जैन स्थल मिले हैं।[2]

शिलालेखों पर लिखित समय के अनुसार अधिकांश मूर्तियाँ कुषाण वंश के समयकाल के है।कंकाली टीला से प्राप्त शिलालेखों पर उनके दान दाताओं के नाम भी लिखे हैं। दान दाताओं में कुछ नाम जैन भिक्षुणीयों के भी है, जैन धर्म के इतिहास में दिगम्बर सम्प्रदाय महिलाओं को भिक्षुणी बनने की आज्ञा नहीं देता है, केवल भगवान महावीर के समय काल और श्वेताम्बर के पहले दिनों में जैन भिक्षुणीयों का अस्तित्व था। शिलालेख में एक देवता के नाम का उल्लेख है —नैमेष (नैगमेष), जो हिन्दू देवता "हरिनेगमेषी " के नाम का संक्षिप्त रूप है,लेकिन यह प्रसंग केवल श्वेताम्बर साहित्य में वर्णित है।

इन दो मुख्य बिन्दुओं के माध्यम से हम यह विचार कर सकते हैं कि कुषाण वंश के समय में मथुरा के आसपास निवसित जैन धर्म के अनुयायी श्वेताम्बर सम्प्रदाय के थे। जैन दिगम्बरों की कई प्रतिमाएं एवं शिलालेख मथुरा के कंकाली टीला में पाए गए है। मुख्य रूप से दो प्रकार की जैन प्रतिमाएं पाई गई हैं - एक पद्मासन में तथा दूसरी खड़ी अवस्था में, दोनों प्रकार

[2]Ash|m Kumar Roy, ***A h /story of the Ja /ns***, New Delh|: G|tanjal|Publ|sh|ng House, 1984, P. 54.

की मूर्तियाँ नग्न शैली में बनाई गयी है,[3] भारत में छोटे स्तर पर जो भी जैन मंदिर और मूर्तियाँ पाई जाती हैं उनमें से अधिकांश इन्हीं शैलियों में पाई जाती हैं। उपरोक्त वर्णनों के आधार पर हम कह सकते है कि ईसा पूर्व पांचवीं शताब्दी तक जैन धर्म अपनी प्रारंभिक विशेषताओं को बनाए रखा था, चाहे श्वेताम्बर हो या वस्त्र का त्याग करने वाले दिगम्बर दोनों सम्प्रदाय महिलाओं को भिक्षुणी बनने की अनुमति देते थे,श्वेताम्बर एवं दिगम्बर में अत्यधिक अंतर नहीं था।

इसके बाद श्वेताम्बर एवं दिगंबर के मध्य अंतर बढ़ता गया,पांचवी शताब्दी में गुप्त काल के आते आते तक श्वेताम्बर और दिगंबर दो विभिन्न स्वतंत्र सम्प्रदायों में स्थापित हो गए।चूँकिपाटलिपुत्र में आयोजित प्रथम जैन संगीति में "बारह आगम " में से बारहवें आगम "दीथीवाया" को नहीं खोजा जा सका, श्वेताम्बर संप्रदाय के द्वारा पांचवी शताब्दी (५१२ ई.) में गुजरात के वल्लभी में द्वितीय जैन संगीति का आयोजन किया गया जिसकी अध्यक्षता आचार्य देवर्षिक्षमाश्रमण ने की, इस संगीति में बारहवें आगम का संकलन कर लिपिबद्ध किया गया। परन्तु दिगम्बर सम्प्रदाय का मानना है कि जैन धर्म के जितने धर्म ग्रंथों को पुनः संकलित किया गया है वे पूरी तरह अप्रमाणिक है, श्वेताम्बर सम्प्रदाय द्वार संकलित बारहवें आगम को नकली है।वल्लभी में जैन संगीति के पश्चातदिगम्बर तथा श्वेताम्बर के धर्मग्रंथ एवं धर्म साहित्य पूरी तरह अलग हो गए।

इसके अलावा, वस्त्र धारण किये जैन मुनियों की मूर्ति सबसेपहली छवि गुजरात राज्य के अकोता नामक स्थान में पाई गयी है,जिसका पुरातत्ववेत्ताओं द्वारा पांचवी शताब्दी के उतरार्ध का समय सत्यापित किया गया है।[4] समय की दृष्टि से देखने पर, सबसे पहली वस्त्र धारण की हुई जैन मुनि की मूर्ति और वल्लभी में आयोजित जैन संगीति का समय दोनों लगभग एक ही शताब्दी का है। इससे पता चलता है कि श्वेताम्बर आरंभिक काल से ही वस्त्र धारण किये हुए जैन मुनियों की पूजा करते थे, इसलिए श्वेताम्बर और दिगंबर दोनों का विभाजन हो चूका था। श्वेताम्बर वस्त्र धारण किये हुए जैन मुनियों की पूजा करते थे, वहीं दिगंबर नग्नत्व को धारण किये हुए जैन मुनियों की पूजा करते थे, इससे यह भी स्पष्ट है कि वल्लभी में आयोजित द्वितीय जैन संगीति के पश्चात दोनों सम्प्रदायों के मध्य अंतिम विभाजन हो चूका था। श्वेतांबर और दिगंबर के भौगोलिक स्थिति भी दोनों के विभाजन को प्रमाणिक करते है। वर्तमान में दिगंबर संप्रदाय के अधिकतर अनुयायी मुख्य रूप से वल्लभी और उसके पांच वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में रहते हैं। दिगंबर सम्प्रदाय के अधिकतर अनुयायी मुख्य रूप से उत्तरप्रदेश, पूर्वी राजस्थान और दक्षिणी भारत में निवास करते हैं।

श्वेताम्बर तथा दिगंबर संप्रदाय के मध्य मुख्य अंतर

सर्वप्रथम, श्वेताम्बर के "ग्यारह आगम" नकली हैं ? प्रथम जैन संगीति पाटलिपुत्र में आयोजित की गयी थी, इस संगीति में "मूल धर्मवैधानिक शास्त्र" का पुनः संपादन किया गया और "बारह आगम" में संकलित किया गया। कालांतर में "बारह आगम" में से बारहवां आगम लुप्त हो गया।पांचवी सदी के आसपास गुजरात के वल्लभी में द्वितीय जैन संगीति का आयोजन हुआ जिसकी अध्यक्षता आचार्य देवर्षि क्षमाश्रमण ने की, इस संगीति में संकलित "ग्यारह आगम" श्वेताम्बर सम्प्रदाय के अंतिम धार्मिक शास्त्र बन गये। लेकिन दिगंबर सम्प्रदाय का मानना है कि "बारह आगम" के प्रारंभिक ग्यारह आगम भी लुप्त हो गए थे, और द्वितीय जैन संगीति में संकलित ग्यारह आगम प्रमाणिक नहीं है,दिगम्बर सम्प्रदाय के अनुसार मूल "आगम" लुप्त हो गए थे, पुनः संकलित आगम नकली है और दिगंबर उन्हें स्वीकार नहीं करता। दूसरा मुख्य बिंदु यह है कि अरिहंत (केवलज्ञानी) को भोजन ग्रहण करना चाहिए की नहीं ? दिगंबर के अनुसार जब मनुष्य अरिहंत को प्राप्त होता है तब वह सामान्य मानव से परे हो जाता है, वे सामान्य मानवी शारीरिक सीमा को पार कर जाते है और उन्हें

[3]Ash।m Kumar Roy, ***A history of the Jains***, New Delhi: Gitanjali Publishing House, 1984, P. 65.

[4]Ash।m Kumar Roy, ***A history of the Jains***, New Delhi: Gitanjali Publishing House, 1984, P. 66.

भोजन करने की आवश्यकता नहीं रह जाती। परन्तु श्वेताम्बर ऐसा नहीं सोचते, उनके अनुसार मानव अरिहंत होने का पश्चात भी मानव ही रहता है, वह केवल मानवीय विकास का उन्नत रूप है लेकिन तब भी उसमें मानवीय विशेषताएं रहती हैं जैसे भोजन ग्रहण करना, मलमूत्र त्याग करना। इस प्रकार अरिहंत के स्वरूप को लेकर श्वेताम्बर के विचार दिगंबर से पूर्णतः भिन्न हैं।

तीसरा मुख्य अन्तर महिलाओं के प्रति दृष्टिकोण को लेकर है, श्वेताम्बर पुरुष और स्त्री को एक समान मानता है,महिलाएं भी कैवल्य प्राप्त कर सकती हैं/वहीं दिगंबर स्त्री - पुरुष में भेदभाव करता है, नारी को भिक्षुणी बनने के योग्य भी नहीं मानता है/

यद्यपि श्वेताम्बर तथा दिगंबर संप्रदाय में कुछ मतभेद है लेकिन फिर भी दोनों संप्रदाय एक ही धर्म से हैं, कुछ मतभेदों को छोड़कर दोनों संप्रदाय साथ-साथ काम करते हैं/उदाहारणस्वरुप दोनों संप्रदाय समय-समय पर सम्मिलित रूप से बड़े स्तर पर धार्मिक आयोजन करते हैं/वर्तमान में भी, कई बड़े-बड़े जैन धर्म के आयोजनों में दोनों सम्प्रदाय भाग लेते हैं/दोनों संप्रदाय के अनुयायी सद्भाव के साथ एक ही तीर्थ में निवास करते हैं/

जैन धर्म के विभाजन का उसके विकास पर प्रभाव

१. जैन धर्म के प्रसार का विस्तार

विभाजन के पश्चात जैन धर्म एक क्षेत्र विशेष तक ही सीमित नहीं रहा, दोनों संप्रदाय का व्यापक प्रचार-प्रसार हुआ। विभाजन के पश्चात श्वेताम्बर संप्रदाय मूल जैन धर्म से भिन्न था तथा नग्नत्व के अभ्यास पर ज्यादा ज़ोर नहीं देता था, श्वेताम्बर संप्रदाय के अधिकतर अनुयायी व्यवसायी थे जिनकी पहुँच लगभग सम्पूर्ण भारतवर्ष में था, जैन धर्म के प्रसार का एक प्रमुख कारण था। आठवीं से बारहवीं शताब्दी तक भारत के कुछ राज्यों के शासकों के समर्थन के कारण जैन धर्म का बहुत विकास हुआ, जैसे दक्षिण भारत के कर्णाटक क्षेत्र के गंग वंश के राजा दुर्विनीत स्वयं जैन धर्म के अनुयायी थे, उनके राज-दरबार में बहुत से जैन धर्म के विद्वा न्थे जो दर्शन, मनोविज्ञान, गणित तथा चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में उपयोगी शोध राजा के सहयोग से करते थे, साथ ही राजा दुर्विनीत ने कर्णाटक और तमिलनाडु में बहुत से जैन मुनियों की विशाल मूर्तियों का निर्माण कराया।[5]

२. अनुयायीयों की संख्या में अप्रत्याशित वृद्धि

आरंभिक जैन धर्म की शिक्षाओं में तपस्या पर बहुत ध्यान दिया जाता था, अध्यात्मिक अभ्यास का माध्यम अधिक कठिन और जटिल था, जिसके कारण जैन धर्म में नए उपासकों का प्रवेश अपेक्षाकृत कठिन था। जैन धर्म में विभाजन के उपरांत दिगम्बर संप्रदाय ने तपस्या और नग्नत्व अभ्यास पर ज्यादा जोर दिया, तपस्या ही धार्मिक जीवन का मूल है, तपस्या के अभ्यास के माध्यम कठिन थे। वर्तमान समय में भी कुछ जैन धर्मावलम्बी अन्न–जल का परित्याग कर मृत्यु की प्रतीक्षा करते हैं। दिगंबर सम्प्रदाय के वस्त्र न पहनकर नग्न रहने की प्रथा अधिकतर लोगों के लिए स्वीकार करना कठिन था।

यद्यपि विभाजन के उपरांत श्वेताम्बर धर्मावलम्बियों की संख्या में पहले की अपेक्षा अत्यधिक वृद्धि हुई, जिसने पुरे जैन धर्म को सशक्त किया तथा जैन धर्म के सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक प्रभाव का विस्तार किया। श्वेतांबर संप्रदाय दिगंबर सम्प्रदाय के नग्न प्रथा का विरोध करता है तथा महिलाओं के प्रति किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं करता है, परिणामस्वरूप श्वेताम्बर सम्प्रदाय महिलाओं एवं व्यापारियों को आकर्षित करता है। श्वेताम्बर संप्रदाय के प्रभाव के कारण, आरंभिक मूल जैन धर्म के अनुयायियों की तुलना में

[5]गोंगजिंग, "द डॉक्ट्रिन, हिस्ट्री एंड करंट सिचुएशन ऑफ़ जैन धर्म", साउथ एशियन स्टडीज़,1987, नंबर 3।

अप्रत्याशित वृद्धि हुई है। वर्तमान समय में श्वेताम्बर के अनुयायियों की संख्या दिगम्बर संप्रदाय के अनुयायियों से बहुत अधिक है। वर्त्तमान में भारत की शहरी जनसंख्या के उच्च और मध्य वर्ग में एक निश्चित जनसँख्या है जिन में से अधिकांश व्यवसायी हैं।

३. भारतीय धार्मिक विचारों को समृद्ध करने वाला कोष

जैन धर्म दो सम्प्रदायों में विभक्त होने के बाद, दोनों सम्प्रदायों ने धार्मिक साहित्य के विरासत में विस्तार पर अत्यधिक महत्व दिया तथा बहुत ही समृद्ध और मूल्यवान धार्मिक साहित्य संचित किया।श्वेताम्बर तथा दिगंबर दोनों सम्प्रदायों में लम्बे समय तक धार्मिक उपदेश, धार्मिक संस्कार तथा धार्मिक ग्रंथों पर तर्क- वितर्क ने जैन धर्म के धार्मिक विचार और दर्शन को बहुत ही समृद्ध किया।

४. भारत की आर्थिक संस्कृति के विकास को प्रोत्साहन एवं वैश्विक सम्बन्ध को प्रगाढ़ करने में योगदान

श्वेताम्बर विचारों में अधिक खुले, अधिक व्यावहारिक तथा विश्व के साथ अधिक निकटता से जुड़े हुए हैं तथा भारत के सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, राजनीतिक और आर्थिक क्षेत्रों में महत्वपूर्ण प्रभाव रखते हैं। श्वेताम्बर संप्रदाय द्वारा सम्पादित ग्रन्थ "बारहकड़ियाँ" में जैनियों की कई कहानियां संकलित हैं। कुछ जैन व्यवसायी अभी-भी विदेश में व्यापार करते हैं जिनकी पहुँच वर्तमान के श्रीलंका, फारस, ग्रीस, अरब आदि देशों में हैं। जैन व्यापारी व्यापार करने के लिए विदेश गए, भारतीय मसालों, सूती वस्त्रों आदि को दूसरे देशों में ले गए तथा विदेशों से विभिन्न विदेशी वस्तुओं को भारत में लाए, जिससे आर्थिक विकास को बढ़ावा मिला और भारतीय उपमहाद्वीप और अन्य देशों के मध्य आर्थिक और सांस्कृतिक आदान-प्रदान को बढ़ावा मिला।

निष्कर्ष

वर्तमान में, भारत में जैन धर्म की उपस्थिति के अलावा,जैन धर्म का अस्तित्व सम्पूर्ण विश्व के बहुत से देशों में है।19 वींशताब्दीकेबादजैन का प्रसार दक्षिण अफ्रीका में भी होने लगा, 20 वींशताब्दीआते आते यूरोपीय और अमरीकी देशों में भी जैन धर्म का प्रचार - प्रसार हो गया। जैन विचारक और विद्वान अंतरराष्ट्रीय धार्मिक सम्मेलनों और अकादमिक चर्चाओं में सक्रिय रूप से भाग ले रहे हैं, जिससे विश्व इस प्राचीन धर्म को लगातार पहचान रही है। अभी तक, जैन धर्मावलम्बियों ने जैन धर्म के प्रचार ले लिए दर्जनों संगठन स्थापित किए हैं, जैसे जैन मैत्री संघ, जैन युवा सम्मेलन, अंतर्राष्ट्रीय जैन संघ आदि। साथ ही जैन धर्म के शिक्षाओं के प्रचार के लिए कई मंदिरों, अनुसंधान संस्थानों और विद्यालयों का निर्माण किया गया है। विदेशों में भी जैन धर्म के कई संगठन हैं, जैसे ब्रिटेन में जैन ब्रदरहुड, और जर्मनी में एक पुस्तकालय है जो जैन धर्म का प्रसार करता है। जैन धर्म के विकास के ये चरण प्रदर्शित करते हैं कि जैन धर्म पूर्व में हुए विभाजन के बाद भी अविभाज्य है।

*** Corresponding Author:**
हूरुई (Hu Rui)
एसोसिएट प्रोफेसर, दक्षिण एशियाई भाषा व साहित्य विभाग
डाक्टर, विदेशी साहित्य और संस्कृति अनुसंधान केंद्र
ग्वांगडोंग विदेशी अध्ययन विश्वविद्यालय,चीन
Email- 904950606@qq.com, 2010hurui@163.com
Mob. - 86-15918796285, 18468249047